Knowledgeable Research **Vol-1, No-4, *November 2022***

An International Open-access Peer-reviewed Journal **Web: http://www.knowledgeableresearch.com/**

बाल साहित्य का ऐतिहासिक परिदृश्य

डॉ. श्रीकांत मिश्र
एसिस्टेंट प्रोफेसर
स्वामी शुकदेवानंद महविद्यालय, शाहजहांपुर
ईमेल: dr.shrikantmishra@gmail.com

****

शोध सारांश

अतीत की प्रेरणाएँ मानव को महान बनाने में परम सहायक होती हैं क्योंकि ''मनुष्य अपने भविष्य का निर्माण अतीत के अनुभवों के आधार पर ही करता है।''[1] इतिहास जानना अपने आप में बड़ा ही रोचक विषय है, उस पर भी बाल साहित्य का इतिहास तो (अचर्चित होने के कारण) और भी अधिक रोचक एवं कौतूहलजनक कहा जा सकता है। इस विषय पर यथासंभव प्रकाश डालना ही इस अध्याय का उद्देश्य है। मानवीय सभ्यता और बाल साहित्य दोनों ने एक साथ ही नीले आकाश में टिमटिमाते तारे निहारे होंगे, एक साथ ही प्रकृति की गोद में अँगड़ाई ली होगी, माता वसुंधरा ने दोनों का पालन-पोषण एक साथ ही किया होगा, तभी तो दोनों सहोदर की भाँति विकास-पथ पर साथ-साथ चल निकले। रोते हुए बालक को बहलाने के लिए माँ के मुख से अनायास ही कोई गीत बह निकला होगा अथवा नानी-नाना, दादा-दादी के मुख से जब बच्चे के लिए कोई कहानी बुन चली होगी। यदि दूसरे शब्दों में कहा जाए तो इस जगत में बच्चे ने जन्म लिया होगा तभी से लोरी, कहानी, कविता आदि रूपों में बाल साहित्य पल्लवित, पोषित एवं मुखरित हुआ होगा।

Keywords: बाल साहित्यकार, मानवीय सभ्यता, ऐतिहासिक, परिदृश्य

प्रख्यात बाल साहित्यकार गिरिराजशरण अग्रवाल जी की दृष्टि में जब से मनुष्य ने समूह में रहना सीखा होगा तभी से वह गीत, नृत्य और नाट्य आदि के द्वारा मनोरंजन करने लगा होगा। अग्रवाल जी के शब्दों में - ''गीत, नृत्य और नाट्य, ये तीन कलाएँ ऐसी हैं, जो आरंभ से मानव की सामूहिक गतिविधियों का केंद्र रही हैं। मनुष्यों के समूह दिन-भर कड़े परिश्रम के बाद जब रात को निश्चिंत होकर मिल-बैठते तो वे सामूहिक रूप से मनोरंजन की मुद्रा में गीत गाते, नृत्य करते या उन चीजों की नकल करके अपना मन बहलाते, जो उनके अनुभव में आ चुकी होती थीं।'' [2]

गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर बाल साहित्य पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहते हैं- ''ठीक से देखने पर बच्चे जैसा पुराना और कुछ नहीं है। देश, काल, शिक्षा, प्रथा के अनुसार वयस्क मनुष्यों में कितने नए परिवर्तन हुए हैं, लेकिन बच्चा हजारों साल पहले जैसा था, आज भी वैसा ही है। वही अपरिवर्तनीय पुरातन बारम्बार आदमी के घर में बच्चे का रूप धरकर जन्म लेता है, लेकिन तो भी सबसे पहले दिन वह जैसा नया था, जैसा सुकुमार था, जैसा भोला था, जैसा मीठा था, आज भी ठीक वैसा ही है। इस जीवन चिरंतनता का कारण यह है कि शिशु प्रकृति की सृष्टि है, जबकि वयस्क आदमी बहुत अंशों में आदमी की अपने हाथ की रचना होता है। उसी तरह बच्चों के बहलाने के लोकगीत भी शिशु साहित्य हैं, वे मनुष्य के मन में अपने आप जन्मे हैं।''[3] गुरुदेव के इस विचार से यह स्पष्ट होता है कि बाल साहित्य मानव सृष्टि के साथ-साथ चला आ रहा शाश्वत साहित्य है।

बाल साहित्य के ऐतिहासिक परिदृश्य को भली-भाँति जानने के लिए सर्वप्रथम आदि ग्रंथों, वेद, पुराणों, स्मृति आदि में बाल साहित्य के अंकुर देखने की आवश्यकता है, क्योंकि प्राचीन काल में साहित्य रचना बच्चों को ध्यान में रखकर नहीं की जाती थी, बड़ों की रचनाओं में ही बाल साहित्य के बीज विद्यमान रहते थे। साहित्य का इतिहास लिखने से पूर्व यदि वेदों की चर्चा न की जाए तो ठीक वैसा ही होगा जैसे किसी वृक्ष के इतिहास को लिखने से पूर्व उसके बीज अथवा मूल को छोड़ दिया जाए। इसलिए सर्वप्रथम सबसे

प्राचीन वेदऋग्वेद की चर्चा करना समीचीन होगा। ऋग्वेद का रचनाकाल प्रायः 2000 से 6000 ईसा पूर्व के लगभग माना जाता है। ऋग्वेद भारत का ही नहीं अपितु विश्व का प्रथम और प्राचीनतम साहित्य माना जाता है।''[4]

वेद भारतीय जीवन के आदि ग्रंथ हैं, इन वेदों में भारतीय जीवन अथवा परंपरा का विकास स्पष्ट दिखाई पड़ता है। यदि दूसरे शब्दों में कहें तो वेद यहाँ की जीवन पद्धति केप्रकाशक है। ''बिना किसी शंका के हम यह मान सकते हैं कि भारत में वैदिक युग के भारतीयों के जीवन के प्रारंभिक काल से ही अनेक प्रकार की कहानियाँ लोगों में प्रचलित थीं.....ऋग्वेद के एक प्रसिद्ध सूक्त का जिसमें यज्ञ के अवसर पर मंत्र-गान करते हुए ब्राह्मणों की तुलना टर्र-टर्र करने वाले मेंढकों से की गई है, उससे स्पष्ट है कि मनुष्यों तथा अन्य प्राणियों के बीच एक प्रकार का संबंध स्वीकार कर लिया गया है। उपनिषदों में यह बात स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाती है।'' [5]

डॉ० शकुंतला कालरा बाल साहित्य के इतिहास को संस्कृत साहित्य से जोड़ते हुए कहती हैं - ''संस्कृत साहित्य विश्व का प्राचीनतम साहित्य है। हमारे पुराणों में अध्यात्म, धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, सृष्टि-विज्ञान, इतिहास एवं खगोल आदि की अत्यंत रोचक शैली में जानकारी मिलती है। इनमें कहानियाँ अंकुर रूप में हैं जो समाज के धार्मिक और मानसिक स्तरों को व्यक्त करती हैं। व्यासकृत भागवत पुराण में अनेक कथाएँ ऐसी हैं जिन्हें बाल साहित्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसी प्रकार महाभारत और वाल्मीकि रामायण आदि अन्य संस्कृत ग्रंथों में भी ऐसी बहुत कहानियाँ मिलती हैं जो बालकों के उपयोग की हैं। यद्यपि वाल्मीकि रामायण में रामचरित का वर्णन है जिसका बच्चों से प्रत्यक्ष रूप से कोई संबंध नहीं किंतु उसमें ऐसे अनेक कथा-प्रसंग सन्निहित हैं जो बालकों को आकृष्ट करते हैं। इसी प्रकार महाभारत में भी ऐसे प्रसंग हैं जिन्हें बालकों ने पसंद किया है। ऐसी अनेक बालोपयोगी कहानियाँ हैं जो बालकों को प्रेरणा देती हैं।''[6] वैदिक संस्कृत के बाद, साहित्य रचना का माध्यम बनी - पालि, प्राकृत तथा अपभंश भाषा। भले ही इन भाषाओं में बाल साहित्य न दिखता हो परंतु बालकों के लिए सरल भाषा में कुछ न कुछ साहित्य अवश्य दिया जा रहा था। रुद्रट के 'काव्यालंकार' के टीकाकर, जैन विद्वान नमिसाधु (11वीं शती ई0) ने लिखा है-''देवताओं की अर्द्ध-मागधी वाणी ऋषियों की प्राकृत से निर्मित होती है, प्राकृत का अर्थ है पूर्व-कृत, प्राक्-कृत। सर्व-प्रथमोद्भूत-यह वह वाणी है जो बालकों और महिलाओं को सुबोध, सहज-गम्य है।''[7]

जैन विद्वान नमिसाधु के विचार को देखने के बाद यह बात तो स्पष्ट दिखाई देती है कि पालि, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में बच्चों के लिए अलग से भले ही न लिखा गया हो परंतु सम्मिलित रूप से उनके लिए कुछ न कुछ जरूर विद्यमान रहा है। हाँ यह बात अलग है कि उस साहित्य को बच्चों के लिए भाषा के स्तर पर ही बोधगम्य बनाया जाता हो या बच्चों-महिलाओं के लिए लिखे गए साहित्य का प्रचार-प्रसार न हो सका हो। जयप्रकाश भारती जी लिखते हैं -''बौद्ध और जैन कथाओं का उद्देश्य तो धर्म तथा राजनीति का प्रचार था किंतु समाज में अनेक स्तरों, रीति-नीति, धार्मिक, नैतिक और मानसिक धरातलों का उनसे पर्याप्त परिचय मिलता है। उस काल में तो इन कथाओं का मौखिक रूप से प्रचलन रहा होगा, लिखित रूप बाद में सामने आया। जातक कथाएँ बहुत ही व्यापक और मानव के समीप हैं। इनमें राजा, सेठ-साहूकार से लेकर दरिद्र, चोर, चांडाल, अपराधी आदि चर तथा नदी, पहाड़, पेड़-पौधे आदि अचर तथा सब प्रकार के जीव-जंतु, पशु-पक्षी आदि सजीव पात्रों के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। इनके माध्यम से हमारे जीवन के व्यापक रूपों को बाँधने का प्रयत्न किया गया है। कथा साहित्य के विकास में जैनाचार्यों का योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने यों तो धार्मिक कथाएँ ही अधिक लिखीं किंतु लौकिक कथाओं की रचना भी इसी प्रकार की, कि उनमें कला और कल्पना का अनोखा पुट है। जैनों और बौद्धों की अनेक नीति कथाएँ बहुत प्रसिद्ध हैं। भरहुत (तीसरी शताब्दी ई0पू0) स्तूप पर कितनी ही नीति कथाओं के नाम खुदे हुए हैं। नीति संबंधी कथाओं के लिए 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' तो सदा ही उल्लेखनीय रहे हैं। इन कथाओं का मुख्य उद्देश्य जटिल स्थिति में चतुराई का प्रदर्शन अथवा उलझन को बुद्धि-चातुर्य से सुलझाना है। संस्कृत साहित्य के ऐसे ग्रंथों में प्रमुख हैं - वृहत्कथा, श्लोक संग्रह, कथा-सरित्सागर, वेताल पंचविंशतिका, शुकसप्तति और सिंहासन द्वात्रिंशिका। संस्कृत और पालि साहित्य के अलावा आख्यायिका का रूप प्राकृत में भी संवरता जा रहा था। गुणाढ्य की वृहत्कथा प्राकृत में प्रसिद्ध है।''[8] पहले समय में परिवार के बड़े-बूढ़े छोटे बच्चों को कहानियाँ सुनाया करते थे। इन कहानियों के द्वारा बच्चे शिक्षित और दीक्षित होते थे। एक राजा के मूर्ख पुत्रों को एक विद्वान पंडित ने छोटी-छोटी कहानियाँ सुनाकर बुद्धिमान बनाया था। पंचतंत्र की कहानियों के जन्म का कारण यही था। हमारे लोक जीवन में लोक कथाओं का कभी एक समृद्ध संसार था। लोक कथाओं को सुनने-सुनाने की परंपरा त्यागते जाने से यह समृद्ध संसार अब क्षीण होता जा रहा है, जो शुभ नहीं है।''[9] बाल साहित्य की ऐतिहासिक विकास यात्रा में लोक

साहित्य का अपना अलग ही स्थान है, लोक साहित्य को पं0 हजारी प्रसाद द्विवेदी -आर्येतर सभ्यता का वेद एवं पं0 रामनरेश त्रिपाठी 'प्रकृति के उद्गार' मानते हैं। बाल साहित्य के श्रेष्ठ तपस्वी निरंकार देव 'सेवक' जी की दृष्टि में वह स्वयंसिद्ध और वेदों की ऋचाओं के समान अपौरुषेय होता है। जन-जीवन से उसकी उत्पत्ति होती है और परंपरा उसका शृंगार करती है।[10] इस प्रकार यह बाल साहित्य का मूल स्रोत सिद्ध होता है।

पुराणों, वेदों आदि में प्राप्त कथाओं की शिष्ट साहित्य धारा के ठीक समानांतर लोक-प्रचलित कथाओं की धारा भी आदि काल से संबंधित है। गुणाढ्य ने सर्वप्रथम इस द्वितीय धारा का संग्रह जनभाषा में किया। गोवर्धनाचार्य ने बड्डकहा को व्यास और वाल्मीकि की कृतियों के पश्चात् तीसरी महान कृति मान कर गुणाढ्य को व्यास का अवतार कहा है। निश्चय ही गुणाढ्य लोक-कथाओं के प्रथम और महान संग्रहकर्ता हैं। उन्होंने जो आधार भूमि तैयार की उसी पर बाल साहित्य का भव्य भवन खड़ा हुआ है।[11] लोक साहित्य ने लंबे समय तक मौखिक यात्रा की और इस यात्रा के दौरान इसके स्वरूप में प्रतिपल निखार एवं परिवर्तन हुए, लोक साहित्य के क्षेत्र को कम करके आँकना अल्पज्ञता ही कही जाएगी। लोरी, गीत, प्रभाती, नानी आदि की कथाएँ, पहेलियाँ, मुहावरे, कहावतें, स्वाँग आदि इसके व्यापक परिक्षेत्र के ही सूचक हैं। निश्चय ही लोक साहित्य रत्नों की ऐसी खान है इसे जितना खोदा-शोधा जाएगा, उतने ही बहुमूल्य रत्न हस्तगत् होंगे। संस्कृत को छोड़कर अन्य भारतीय भाषाओं में लिखित साहित्य के प्राचीन इतिहास पर यदि दृष्टि डाली जाए तो किसी में भी हम ऐसा कोई भी साहित्य नहीं देखते हैं जिसे बालकों के लिए विशेष तौर पर लिखा गया हो। संस्कृत में पंचतंत्र, कथा सरित्सागर और हितोपदेश आदि ग्रंथों की कहानियों में बीच-बीच में आए पद्य श्लोक किशोरों को शिक्षित करने वाले हैं। परंतु आधुनिक तमिल, तेलुगू, मराठी, गुजराती, हिंदी, बंगाली, असमी, पंजाबी, उर्दू आदि भाषाओं में जो भी बाल साहित्य लिखा गया उस का इतिहास डेढ़-दो सौ वर्ष से अधिक प्राचीन नहीं है। हिंदी में बाल साहित्य के इतिहास की चर्चा से पूर्व यह समझ लेना समीचीन प्रतीत होता है कि प्रौढ़ साहित्य रूपी शरीर में बाल साहित्य रूपी रुधिर आदिकाल से प्रवाहित रहा या दूसरे शब्दों में कहें तो बाल साहित्य प्रौढ़ साहित्य का प्रस्थान बिंदु रहा होगा क्योंकि बच्चा ही मनुष्य का प्रारंभिक स्वरूप है। सेवक जी की इस बात से पूर्णतः सहमत हुआ जा सकता है कि बड़ों की कविता के इतिहास में जैसे वीरगाथा, भक्ति या रीति काल अथवा छायावादी प्रगति या प्रयोगवादी युगों की कल्पना करके काल विभाजन कर लिया गया है वैसा कोई काल विभाजन बालगीत साहित्य के इतिहास में नहीं किया जा सकता। बच्चों की भावनाएँ, स्वाभाविक जिज्ञासाएँ और प्रवृत्तियाँ सदा एक सी रहने वाली होती हैं।''[12] इतिहास के दर्पण में झाँक कर देखा जाए तो इन प्रौढ़ साहित्य के कालों में बच्चों के लिए बाल साहित्य त्रिवेणी में सरस्वती की भाँति गुप्त रूप से प्रवाहित होता रहा है। हाँ, यह बात अलगहै कि इस संस्कारदायिनी पुनीत धारा का प्रत्यक्षीकरण वे सुधीजन ही कर सके जिनका मन और हृदय एक शिशु की भाँति मलरहित रहा। काल विभाजन की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी लिखते हैं - ''जिन-जिन प्रभावों की प्रेरणा से काव्यधारा की भिन्न-भिन्न शाखाएँ फूटती रही हैं, उन सबके सम्यक्निरूपण तथा उनकी दृष्टि से किए हुए सुसंगत काल विभाजन के बिना साहित्य के इतिहास का सच्चा अध्ययन कठिन दिखाई पड़ता था।''[13] शुक्ल जी समाजिक चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य-परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही 'साहित्य का इतिहास' मानते हैं। समाज से साहित्य का प्रभावित होना एक आवश्यक घटना है क्योंकि साहित्य को समाज का दर्पण हका जाता है। साहित्य को पढ़कर उस समय की सामाजिक चित्तवृत्तियों का पता बड़ी सहजता से लगाया जा सकता है। इसी संदर्भ में रामस्वरूप चतुर्वेदी जी के विचारों को लिखना भी प्रासंगिक है- ''संसार को समझना दर्शन का काम है, उसे बदलना राजनीति का काम और उसकी पुनर्रचना साहित्य का दायित्व है।''[14] इन महानुभावों के विचार एक स्पष्ट संदेश हमारे सामने रखते हैं कि समाज और साहित्य में बड़ा घनिष्ठ संबंध है। यह बात स्वतः सिद्ध है कि बाल साहित्य सदा से साहित्य का सहचर रहा है। दूसरे शब्दों में कहें तो साहित्य और बाल साहित्य में लंबे समय तक साथ-साथ रह कर समाज कल्याण के मार्ग को प्रशस्त किया। अतः बाल साहित्य के इतिहास को विधिवत् जानने के लिए निम्नलिखित काल विभाजन करना समीचीन रहेगा -

1. आदिकाल में बाल साहित्य - सन् 1000 से 1400 ई0 तक

2. मध्यकाल में बाल साहित्य - सन् 1400 से 1850 ई0 तक

3. आधुनिक काल में बाल साहित्य - सन् 1850 से अब तक

(क) स्वातंत्र्यपूर्व युग - 1850 से 1947 ई 0 तक

(ख) स्वातंत्र्योत्तर युग - 1947 से अब तक

(1) आदिकाल में बाल साहित्य (1000 से 1400 ई0 तक): -

हिंदी साहित्य में आदिकाल शोषक एवं शोषित वर्ग के मध्य संघर्ष, स्वार्थी राजाओं की आपसी कलह, बाह्य आक्रमणों, सामाजिक तनाव तथा धार्मिक विभिन्नताओं के प्रवेश का युग कहा जाता है। ऐसी परिस्थितियांे में जो कुछ साहित्य रचा गया वह श्रेष्ठ तो हो सकता है परन्तुउसकी श्रेष्ठता पर प्रश्न चिह्न इसलिए लगाया जाता रहा है क्यांेकि उस समय कवि आश्रयदाताओं की प्रशंसा करने में अपनी महानता समझते थे अतः वे आम जनमानस से जुड़ नहीं पाये थे। इन सब बातों से हटकर कुछ कवि समाज के लिए भी कुछ न कुछ अपनी उदारता स्वरूप साहित्य को दे दिया करते थे। जिसको समाज ने स्वीकारा और उसक संरक्षण भी किया। बारहवीं शताब्दी के आसपास लिखे गये 'जगनिक' कृत आल्हखण्ड को तत्कालीन समाज ने खूब पढ़ा जिसके कुछ अंश बालकों को प्रभावित करने में सफल रहे। श्री निरंकार देव सेवक जी के शब्दों में - ''जगनिक के आल्हखण्ड के कुछ अंश ऐसे हैं जिन्हें ग्रामीण बच्चे आज तक गाकर सुनाते हुए पाये जाते हैं। शताब्दियों से आल्ह खण्ड की वीर गाथा गाँव-गाँव में चैपालों में या पेड़ों के नीचे सुनाई जाती रहने के कारण उसकी भाषा आधुनिक जैसी हो गई है।'' [15]

जगनिक कृत आल्हखण्ड की पंक्ति दृष्ट्व्य है -

बारह बरिस लौ कूकर जीयैं, औरू तेरह लौं जियैं सियार।

बरिस अठारह क्षत्रिय जीयैं, आगे जीवन को धिक्कार।। [16]

जगनिक के बाद अमीर खुसरो की रचनाओं को बच्चों ने खूब पढ़ा। मुकरियाँ, पहेलियाँ और ढकोसले, बच्चों को इतने लोकप्रिय हुए कि जब तक हिंदी साहित्य को पढ़ा जायेगा तब तक अमीर खुसरो अपनी रचनाओं में जीवित रहेंगे। बाल साहित्यकार 'सेवक' जी खुसरो के विषय में कहते हैं - ''हम अमीर खुसरो को हिन्दी में बच्चों का पहला कवि कह सकते हैं। उनकी निम्नलिखित पहेलियाँ देखने योग्य हैं -

एक थाल मोती से भरा / सब के सिर पर औंधा धरा

चारों ओर वह थाली फिरे / मोती उस से एक न गिरे। - (आकाश)

****

हरा था मन भरा था / हजार मोती जड़ा था

राजा जी के बाग में / दुशाला ओढ़े खड़ा था। -(भुट्टा)

****

बाला था तब सब को भाया / बड़ा हुआ कुछ काम न आया

खुसरो कह दिया उसका नाम / अर्थ करो या छाड़ो ग्राम। -(दीया)

अमीर खुसरो का एक अत्यन्त प्रसिद्ध ढकोसला है -

खीर पकाई जतन से चरखा दिया चला।

आया कुत्ता खा गया तू बैठी बीन बजा।।

पंडित राम नरेश त्रिपाठी ने इस सम्बन्ध में एक स्थान पर लिखा है - ''खुसरो की देखादेखी खवासी खेरा के घासीराम, विगहपुर के पंडित बासू की खगीनियाँ आदि ने भी बहुत सी पहेलियाँ लिखी।'' घासीराम की यह पहेली बहुत प्रसिद्ध है -

कारो है पर कौआ नाहिं / रूख चढ़ै पर बन्दर नाहिं

मुँह को मोटो विड़वा नाहिं / कमर को पतरो चीता नाहिं

घासी कहें खवासी खेरे / है नियरे पर पइहौ हेरे। - (चींटा) [17]

जयप्रकाश भारती जी, 1623 में जटमल द्वारा लिखी गई पुस्तक 'गोरा बादल की कथा' को हिन्दी बाल साहित्य की प्रथम कृति मानते हैं। [18] आदिकाल की इन पुस्तकों तथा रचनाओं में स्पष्ट बाल साहित्य देखा जा सकता है। भले ही वह स्वयं प्रकट हुआ हो अर्थात इस साहित्य को बच्चों को ध्यान में रखकर भले ही न रचा गया हो। इन पुस्तकों, रचनाओं के अतिरिक्त अन्य रचनाओं में भी बाल साहित्य बीज रूप में देखने को प्राप्त हो सकता है।

(2) मध्य काल में बाल साहित्य - (1400 से 1850 ई0 तक): -

मध्यकाल के साहित्य का विधिवत् अध्ययन निम्नलिखित दो भागों में बाँटकर करना प्रासंगिक रहेगा -

(क) पूर्व मध्य काल अथवा भक्ति काल (1400 से 1700 ई0)

(ख) उत्तर मध्यकाल अथवा रीतिकाल (1700 से 1850 ई0)

(क) पूर्व मध्यकाल अथवा भक्तिकाल (1400 से 1700 ई0):

''मध्ययुगीन हिंदी साहित्य का पूर्व मध्ययुग भक्तिकाल के नाम से अभिहित किया जाता है। 'भक्तिकाल' शब्द ही अपने प्रतिपाद्य को स्पष्ट करने वाला है अर्थात् इस काल में भक्तिपरक रचनाओं की प्रधानता रही है। कुछ विद्वानों ने इस काल को हिंदी साहित्य का 'स्वर्ण युग' कहा है। '' [19]

भक्तिकालीन काव्य में बाल साहित्य का स्वरूप:-

भक्तिकाल समाज में व्याप्त विसंगतियों के विरुद्ध एक धार्मिक जागरण था जिसका नेतृत्व कबीर, जायसी, सूर, तुलसी तथा मीरा जैसे अनेक भक्त कवियों ने किया। यह सभी कविगण धर्म के माध्यम से समाज में जागरण लाने के लिए मनसा-वाचा-कर्मणा लगे हुए थे भले ही बच्चों को इस जागरण में प्रत्यक्ष रूप से न जोड़ा गया हो लेकिन परोक्ष रूप से इस कार्य की सफलता बच्चों के जीवन संस्कार से जुड़ी रही या दूसरे शब्दों में कहे तो इन संतों का ध्यान परोक्ष रूप से भावी समाज को संस्कारित करने में लगा था जिसके केंद्र बिंदु बच्चे ही कहे जा सकते हैं। भक्ति काल के साहित्य का विधिवत अध्ययन करने पर यह कहना गलत न होगा कि इस साहित्य ने अपनी नजर भावी समाज को आदर्श प्रदान करने पर टिका रखी थी इस प्रसंग में यह बात नहीं भूली जा सकती कि यदि समाज में कल्याणकारी मूल्यों की स्थापना हो सके तो बच्चे उस समाज से स्वतः सीख लेकर उज्जवल समाज का निर्माण कर सकेंगे। इतिहास साक्षी है बच्चों को यदि सबसे ज्यादा किसी ने प्रभावित किया है तो वह सामाजिक परिवेश। परिवार में माता-पिता से, नानी-नाना से, दादा-दादी से, तो समाज में मिलने वाले मित्रों, सहयोगियों तथा उपदेशकों ने बच्चों की आत्मा को प्रभावित किया। इन सब बातों को सार शब्दों में कहें तो भक्ति काल में भले ही प्रत्यक्ष रूप बच्चों के लिए न लिखा गया हो परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से उसका संबंध बच्चों से देखा जा सकता है। कबीर के काव्य में बाल साहित्य के तत्व खोजने का प्रयास करें तो सरल भाषा में लिखी गई साखियाँ नेत्रों के समक्ष उपस्थित होने लगती हैं -

ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोइ।/आपन तन सीतल करै, औरन को सुख होइ।।

कस्तूरी कंुडलि बसै मृग ढूँढै वन माँहि।/ऐसै घटि-घटि राम हैं, दुनियाँ देखै नाहिं।।

यहु ऐसा संसार है जैसा सैंवल फूल।/दिन दस के ब्यौहार कौं, झूठैं रंग न भूलि।। [20]

प्रस्तुत साखियाँ भाषा के स्तर से बालकों के लिए पढ़ाई जाती हैं और इनमें निहित ज्ञानतत्व को बालक आगे चलकर अपने जीवन में उतार सकते हैं। कबीर दास जी बालक के महत्व से भली-भाँति परिचित थे इसीलिए वे अपने पद में ईश्वर को माता तथा स्वयं को शिशु मानते हुए कहते हैं -

हरि जननी मैं बालक तेरा।

कहे न अबगुन बकसहु मेरा ।। [21]

कबीरदास प्रौढ़ता के अभिमान से दूर रहने के लिए अपने को उस परमात्मा का बालक मानते हैं। भक्तिकाल के कवियों में सूरदास बाल साहित्य के लिए विशेष चर्चा का केंद्र रहे। बाल साहित्य के इतिहास की जब-जब चर्चा की गई तब-तब सूरदास जी के पदों में बाल साहित्य की विवेचना की जाती रही है। हिंदी साहित्य के कवियों में सूरदास को एकमत से भले ही सर्वश्रेष्ठ न माना गया हो। लेकिन इस बात को विश्व के साहित्यकार मान चुके हैं कि सूरदास जी हिंदी के ही नहीं वरन् विश्व की सभी भाषाओं में वात्सल्य रस के अद्वितीय रचनाकार हैं।

महाकवि सूरदास जी की रचना झलकियों पर एक समीक्षात्मक दृष्टि डालते हैं -

बाल कृष्ण की बाह्य चेष्टाओं के प्रदर्शक पद:

1. सोभित कर नवनीत लिये।

   घुटुरुन चलत रेनु तन मंडित मुख दधि लेप किए।।

2. कर पग गहि अँगूठा मुख मेलत।

   प्रभु पौढ़े पालने अकेले, हरषि हरषि अपने रंग खेलत।

3. किलकत कान्ह घुटुरुवन आवत।

   मनिमय कनक नन्द के आँगन, मुख प्रतिबिम्ब पकरिबै धावत।।

4. हरि अपनै आगै कुछ गावत।

   तनिक-तनिक चरननि सौं नाचत मनहिं मनै रिझावत।।

बाल कृष्ण की मानसिक भावनाओं के प्रदर्शक पद:

1. मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी।

   किती बार मोहि दूध पिवत भई यह अजहँू है छोटी।

   तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वै है लाॅबी मोटी।।(स्पद्र्धा का भाव)

2. खेलन अब मेरी जाइ बलैया।

   जब मोहिं देखत लरिकन संग तबहि खिझत बल भैया।।

   (झुँझलाहट का भाव)

3. मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायौ।

मोसो कहत मोल को लीन्हौ तोहि जसुमति कब जायौ।।

(क्षोभयुक्त शिकायत)

4. मैया मैं नहिं माखन खायौ,

ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि, मेरे मुख पलटायौ। 22

(चातुर्य भावना)

निश्चय ही सूरदास वात्सल्य रस के बेजोड़ कवि हैं, उनके काव्य में लोरी एवं प्रभाती भी सहज ही देखने को प्राप्त होती -

- 'मेरे लाल को आउ निंदरिया काहे न आनि सुवावै,

तू काहे न बेगि सी आवै तो कौं कान्ह बुलावै।

(लोरी)

- जागिये ब्रज राजकुॅवर कमल कुसुम फूले,

कुमुद वृंद संकुचित भये भृंग लता भूले।

तमचुर खग दोर सुनहु बोलत बनराई

रांभत गौ खरकनि में बछरा हित धाई। 23

(प्रभाती)

सूक्ष्म दृष्टि से सूर साहित्य को देखें तो स्पष्ट होता है कि सूरदास जी ने बाल मनोविज्ञान को जान समझकर जिस साहित्य का सृजन किया उसने काव्यशास्त्रियों के सामने एक नया रस उत्पन्न कर दिया जिसको दसवें रस अर्थात वात्सल्य रस के रूप में मान्यता मिली। इन सब बातों के बाद प्रश्न उठता है इस साहित्य का लक्ष्य क्या था ? इस का उत्तर यही हो सकता है कि अपने इष्ट बाल कृष्ण की लीलाओं का प्रेममय वर्णन। निष्कर्षतः सूर के कुछ पदों को बालगीत के निकट तो मान सकते हैं, परंतु स्वतंत्र बालगीत की संज्ञा उन पदों को नहीं दी जा सकती। सूरदास जी को बाल स्वभाव को परखने में आदि गुरू कहा जाता है। यदि उन्हें स्वतंत्र रूप से बच्चों का पहला कवि कहा जाए तो यह न्याय संगत नहीं होगा। भक्तिकाल के दूसरे महाकवि तुलसीदास जी के काव्य में बाल लीलाओं का वर्णन तो प्राप्त होता है लेकिन वह भी मर्यादा से बँधा हुआ प्रतीत होता है। सूरदास की भाँति तुलसीदास जी अपने इष्ट की बाल लीलाओं को स्वाभाविक गति नहीं दे सके थे।

1. सोइये लाल लाडिले रघुराई।

मगन मोद लिये गोद सुमित्रा बार-बार बलि जाई।

(लोरी)

2. आँगन फिरत घुटुरूवनि धाए।

नील-जलद तनु-सयाम राम-सिसु जननि निरखि मुख निकट बोलाए।

(बाल लीला)

3. प्रात भयो तात, बलि मातु बिधु बदन पर

मदन बारौ कोटि उठो प्रान-प्यारे। 24

(प्रभाती)

तुलसीदस जी के काव्य में ऐसी अनेक बाल लीलाओं से ओत-प्रोत रचनाएँ मिल जायेगीजो अपने इष्ट मर्यादा पुरूषोत्तम राम के जीवन रंग से रँगी हुई होगी। प्रश्न फिर वही - क्या इन रचनाओं को बाल साहित्य कहा जा सकता है अथवा नहीं ? इन सब बातों में एक तत्व तो अवश्य छिपा है कि भक्ति काल के यह महान कवि बालक और बाल-साहित्य दोनों की महिमा को बहुत ही अच्छी तरह से जानते थे। भक्त प्रवर तुलसीदास अपने महाकाव्य 'रामचरित मानस' में कुछ इस तरह से बाल साहित्य के महत्व को प्रकट करते हैं -

'मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकर खेत।

समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेऊँ अचेत।।

तदपि कही गुर बारहिं बारा। समुझि परी कछुमति अनुसारा।

भाषाबद्ध करबि मैं सोई। मोरे मन प्रबोध जेहिं होई।। 25

तुलसीदास जी का व्यक्तित्व प्रतिभा का धनी था जिस को परख कर उनके गुरू ने बचपन से ही कथा, कहानियों, गीत आदि के माध्यम से समाज के लिए एक ऐसा आदर्श दिया जो समाज का निरंतर पथ-प्रदर्शन करता रहेगा। भक्ति काल के एक से एक प्रकाशवान सितारों का निर्माण उत्तम बाल साहित्य के माध्यम से ही हुआ जो आज भी प्रेरणा का स्रोत हैं। यदि आज पुनः समाज में श्रेष्ठ जनों की प्रतिष्ठा करनी है तो बाल साहित्य के महत्व को विधिवत समझना होगा। भक्तिकाल में कबीर, सूर, तुलसी के अतिरिक्त जिन कवियों के नाम लिए जा सकते हैं उनमें - संत रैदास, नानक, दादू, नरोत्तम, रहीम, रसखान तथा मीराबाई आदि हैं। इनके साहित्य में बालकों के लिए कुछ न कुछ प्रेरणादायी यत्र-तत्र देखने को मिल जाता है उदाहरण के लिए कुछ रचनाएँ जो किशोरों का मार्गदर्शन करने में सक्षम है और उनको किशोरों द्वारा बड़े चाव से पढ़ा भी गया -

'ऐसे बेहाल बिवाइन सों, पग कंटक-जाल लगे पुनि जोए।

हाय महादुख पायो सखा तुम आए इतै न कितै दिन खोए।

देखि सुदामा की दीन दसा करुना करि कै करूना निधि रोए।

पानी परात को हाथ छुयो नहिं, नैनन के जल सों पग धोए। 26 (नरोत्तमदास)

नरोत्तमदास की यह रचना किशोरों के लिए मित्रता और उदारता जैसे गुणों की मिसाल प्रस्तुत करती हुई बड़ी सहजता से उनके हृदय को प्रभावित कर लेती है। इसी प्रकार -

रहिमन प्रीति सराहिए, मिले होत रंग दून।

ज्यों जरदी हरदी तजै, तजै सफेदी चून।

रहिमन देखि बड़ेन को लघु न दीजए डारि।

जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तरवारि।। (रहीमदास)

मानुष हौं तौ वही रसखानि, बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।

जो पसु हौं तो कहा बस मेरो, चरौं नित नंद की धेनु मँझारन। (रसखान)

इन सभी रचनाओं में मोटे तौर पर बाल साहित्य नहीं देखा जा सकता परंतु इस साहित्य को पढ़कर किशोरों में प्रेम, दया, मित्रता, नीति तथा साहित्य प्रेम के गुणों का विकास अवश्य हो सकता है। डॉ० चक्रधर नलिन जी का भक्तिकाल के विषय में मत है कि समाज में प्रचलित दृश्य काव्य के रूप में रामलीला, कृष्णलीला, सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र, धनुष-यज्ञ, केशव लीला आदि का विकास इसी काल की देन है जो बच्चों के लिए लिखित साहित्य का आधार बिन्दु है।

(ख) उत्तर मध्यकाल अथवा रीतिकाल (1700 से 1850 ई0):-

''रीतिकाल में जहाँ सामंतों और राजाओं का जीवन विलासिता से परिपूर्ण था वहाँ सामान्य जनता, जो सच्ची सीधी थी व खुशामदी बातों से दूर थी, प्रायः धार्मिक वृत्ति की बन गयी थी और पूर्ववर्ती भक्तिभावधारा के प्रवाह में योग दे रही थी।'' 28

रीतिकालीन काव्य में बाल साहित्य का स्वरूप:-

रीतिकाल में बाल साहित्य की कल्पना करना कोरा भ्रम प्रतीत होता है जहाँ तक बात बालकों के लिए इस काल में दिये गये साहित्य की है तो वह भी बाल मन को अत्यधिक प्रभावित करने वाला नहीं रहा, परंतु ''लालबुझक्कड़, घाघ और भड्डरी की रचनाएँ बच्चों को ज्ञान ही नहीं पर्याप्त मनोरंजन भी देती है।'' 29

रीतिकाल के कवियों में कंचन, कामिनी की वासना का आधिक्य देखने को मिलता है। इन सब के बाद भी इस काल के साहित्य में जो कुछ श्रेष्ठ साहित्य बच्चों के लिए मिल गया उसको अंगीकार करना समय की माँग थी।

3. आधुनिक काल में बाल साहित्य (1850 से अब तक):-

(क) स्वातंत्र्यपूर्व युग (1850 से 1947 ई0)

(ख) स्वातंत्र्योत्तर युग (1947 से अब तक)।

(क) स्वातंत्र्यपूर्व युग (1850 से 1947 ई0): -

बालकों की विषयवस्तु, ज्ञानाभिवृद्धि तथा रोचकता आदि को ध्यान में रखकर सरल, सरस, सुबोध भाषा तथा बाल मनोविज्ञान को जान समझकर लिखा गया साहित्य आधुनिक काल की ही देन है। यदि दूसरे शब्दों में कहंे तो बाल साहित्य का महत्वपूर्ण विकास तथा संवर्द्धन आधुनिक युग की विशेष उपलब्धि है। ईस्ट इण्डिया कंपनी का भारत में आना बाल साहित्य के इतिहास में ही नहीं वरन् भारतीय समाज के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी। सन् 1608 ई0 मंे इस कंपनी ने भारत भूमि का अधिग्रहण कर भारतीय जनमानस को आधुनिकीकरण की धारा में लाने के लिए सर्वप्रथम बाल शिक्षा संस्थाओं की स्थापना का कार्य प्रारम्भ किया। इन संस्थाओं की सहायता से बालोपयोगी पुस्तकों का निर्माण कार्य शुरू हुआ। लेकिन 1858 ई0 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत की पावन भूमि पर अंतिम श्वांसों को भरते हुए अपनी जीवन लीला समाप्त की। परंतु इस कंपनी के समाप्त हो जाने के बाद भी जो शैक्षिक योजनाएँ इस के द्वारा बनायी गई थीं अंग्रेजों के शासन काल में उन योजनाओं को आगे बढ़ाया गया। इसी क्रम में बाल पाठ्य पुस्तक समितियाँ गठित हुईं तथा इनकी संस्तुति पर बच्चों के लिए पुस्तकों का निर्माण प्रारंभ हुआ जिसके फलस्वरूप पहली बार व्यवस्थित बाल साहित्य का रूप देखने को मिला, इस साहित्य में भारतीय पौराणिक कथाएँ तथा इनका रूपांतरित काव्य, नाटक और यूरोपीय बाल-लोक कथाओं के साथ भारत तथा यूरोप के इतिहास-भूगोल संबंधी तथ्यों को भी सम्मिलित किया गया था। बाल साहित्य के लिए यह कंपनी एक क्रांति के रूप में आयी जिसके परिणामस्वरूप स्वतंत्र रूप से बाल-साहित्य रचना की ओर साहित्यकारों का ध्यान आकर्षित हुआ। हिंदी बाल साहित्य के इसी इतिहास क्रम में भारतेंदु हरिश्चंद्र जी ने भारत दुर्दशा, तथा नील देवी नाटक लिखकर बाल साहित्य लेखन का शुभारंभ किया, इन नाटकों ने खूब ख्याति अर्जित की तथा रंगमंच से बच्चों को सत्य, देश प्रेम और स्वाभिमान जैसे गुणों से परिचित कराया। सन् 1881 ई0 में ही भारतेंदु जी ने बच्चों को 'अंधेर नगरी चैपट राजा' प्रहसन का बहुमूल्य उपहार दिया। इसमें 'चूरन का लटका' तथा 'चने का लटका' बच्चों द्वारा विशेष तौर पर सराहे गये। बाल साहित्य के विद्वान लेखक निरंकार देव 'सेवक' जी के विचार से यह कविता बिल्कुल बालगीत जैसी लगती है।

यथा - चना बनावै घासी राम / जिन की झोली में दुकान।

चना चुर मुर चुर मुर बोले / बाबू खाने को मुँह खोले।

चना खावे तोकी मैना। / बोले अच्छा बना चवैना।

अथवा

चूरन अमल वैद का भारी / जिसको खाते कृष्ण मुरारी।

चूरन पाचक है पचलोना / जिस को खाता श्याम सलोना।

चूरन बना मसालेदार / जिस में खट्टे की बहार।

इसी प्रकार 'नील देवी' नाटक में लोरी भी देखने को मिलती है -

सोओ सुख निंदिया प्यारे ललन / नैनन के तारे दुलारे मेरे वारे

सोओ सुख निंदिया प्यारे ललन। / भई आधी रात बन सन सनात

पशु पक्षी कोउ आवतन जात। [30]

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक बाल साहित्य को गति और स्थायित्व प्राप्त नहीं हो सका था परंतु बीसवीं शताब्दी के शुरू होते ही बाल साहित्य नये मार्तंड के साथ उदित हुआ और स्वतंत्र बाल साहित्य सृजन को गति मिली। इसी समय प्रथम स्वतंत्र बाल साहित्यकार के रूप में पं0 श्रीधर पाठक का उदय हुआ। जिनको प्रथम बालकवि माना गया है। इस संदर्भ में निरंकार देव सेवक लिखते हैं - ''श्रीधर पाठक बड़ों के एक सुविख्यात कवि होने के साथ बच्चों के कवि रूप में प्रकाश में आये। प्राप्त जानकारी के अनुसार उन्होंने ही सबसे पहले स्वतंत्र रूप से मनोरंजक बाल गीत लिखे इसलिए उन्हें ही हिंदी का पहला बालगीतकार कवि माना जा सकता है।'' [31] पंडित श्रीधर के समकालीन प्रमुख बालगीतकारों में बालमुकुन्दगुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय और सुखराम चैवे गुणाकर के नाम लिए जाते हैं। वानर पत्रिका को दिये गये वक्तव्य में 'हरिऔध' जी स्वयं को स्वतंत्र रूप से प्रथम बालगीतकार होने की बात कहते हैं। वानर, फरवरी 1934 पृष्ठ 310 पर दिये गये वक्तव्य को आधार मानकर डॉ० श्रीप्रसाद जी अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के संदर्भ में लिखते हैं - 'हरिऔध जी प्रयोगशील कवि थे। उन्होंने प्रिय प्रवास भी लिखा, चोखे चैपदे, चुभते चैपदे भी ठेठ हिंदी का ठाठ भी। ऐसी स्थिति में उन्होंने बच्चों के लिए प्रयोग के रूप में सबसे पहले यदि लिखना आरंभ कर दिया हो तो असंभव नहीं है। श्रीधर पाठक के पूर्व बालमुकुंद गुप्त की कविता प्राप्त है पर हरिऔध जी जैसे गंभीर कवि का वक्तव्य सिद्ध करता है कि वही हिंदी के प्रथम बाल कवि है। इनकी 'बाल विलास' पुस्तक की कविताओं की उत्कृष्टता के संबंध में, 'माधुरी' पत्रिका ने लिखा था - 'उनकी (हरिऔध जी की) इसमें 21 बालोपयोगी विषयों पर कविताएँ हैं। गिलहरी, बंदर, कोयल, जुगनू, बूँद आदि विषयों पर कविता पढ़ने को किस बच्चेका मन न चाहेगा।' [32]

हरिऔध जी का 'बंदर' पर एक सुंदर बाल गीत दृष्ट्व्य है -

देखो लड़कों बंदर आया। एक मदारी उसको लाया।।

उसका है कुछ ढंग निराला। कानों में पहने है बाला।।

फटे पुराने रंग बिरंगे। कपड़े हैं उसके बेढंगे।।

मुँह डरावना आँखे छोटी। लम्बी दुम थोड़ी सी मोटी।। 33

भारतेंदु युग में बाल साहित्य का जो ढाँचा बना उसको सजाने-सँवारने का कार्य आगे चलकर द्विवेदी युग में और तेज हुआ, बालमुकुंद गुप्त (खिलौना), कामता प्रसाद गुरू (पद्य पुष्पावली), पंडित सुदर्शनाचार्य (चुन्नू - मुन्नू) ने बाल साहित्य की धार को तेज किया और बच्चों को उपयोगी साहित्य प्रदान किया। इन नामों की भाँति कई प्रसि) नाम बाल-साहित्य सेवा में लगे हुए थे

जिनमें प्रमुख हैं - मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, मुरारी लाल शर्मा 'बालबंधु' (वह शक्ति हमें दो .....प्रार्थना) मन्नान द्विवेदी, डॉ० विद्याभूषण विभुग (शेखचिल्ली), स्वर्णसहोदर (गिनती के गीत), शंभूदयाल सक्सेना (आरी निंदिया), ठाकुर श्रीनाथ सिंह (गुब्बारा, दोनों भाई), सुभद्राकुमारी चैहान (कोयल, सभा का खेल), पं0 सोहन लाल द्विवेदी (बच्चों के बापू, हँसो हँसाओ) तथा रमापति शुक्ल (हुआ सवेरा, अंगूरों का गुच्छा) आदि नाम है। 'बालसखा' (लल्ली प्रसाद पाण्डेय), 'शिशु' (सुदर्शनाचार्य), बालक (आचार्य रामलोचनशरण), खिलौना (पं0 रामजी शर्मा), चमचम कुमार (कुॅ0 सुरेश सिंह), 'मदारी' तथा 'तितली' (व्यथित हृदय) आदि सभी पत्रिकाएँ बाल साहित्य को गति प्रदान कर रही थीं। पं0 रामनरेश त्रिपाठी की कहानियों से बाल साहित्य के गद्य को विकास प्राप्त हुआ तथा अनेक विधाओं में बाल साहित्य की सर्जना प्रारंभ हुई। यदि समाज साहित्य से प्रभावित होता है तो साहित्य भी समाज से प्रभावित होता है इस नियम के तहत तत्कालीन समाज की परिस्थितियाँ बाल साहित्य पर अपनी छाया डालती रही थीं। यहाँ तक यात्रा करने के बाद बाल साहित्य में दो प्रवृतियों का प्रकाट्य हुआ प्रथम स्वच्छंदतावादी द्वितीय राष्ट्रीय भावना की प्रवृति। प्रथम प्रवृत्ति के प्रमुख कवियों में पं0 श्रीधर, गोपाल शरण सिंह, जगमोहन सिंह तथा रामनरेश त्रिपाठी आदि है। द्वितीय प्रवृति के संवाहक राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त तथा अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आदि हैं।

बाल निबंध, कहानियाँ तथा जीवनी का भी जोर इस समय रहा। कहानी के क्षेत्र में उपदेश तत्व की कमी आयी एवं प्रेमचंद्र, सुभद्रा कुमारी चैहान तथा राजेंद्र सिंह गौड़ ने बाल मनोविज्ञानपर आधारित बाल कहानियाँ बच्चों को परोसीं इसके साथ वैज्ञानिक बाल साहित्य भी सामने आया। इसके अंतर्गत अविष्कार, वैज्ञानिकों की जीवनियाँ, विज्ञान के जटिल विषयों को बाल उपयोगी बनाकर रोचक निबंधों तथा कहानियों के माध्यम से बच्चों को दिया गया, साथ ही साथ इस साहित्य में नाटक भी पीछे नहीं थे। इस काल के बाल साहित्य पर अपना गंभीर चिंतन प्रस्तुत करते हुए डॉ० हरिकृष्ण देवसरे लिखते हैं -''स्वतंत्रता पूर्व के बाल साहित्य में राष्ट्रभक्ति और सामाजिक उत्थान की ओर अधिकाधिक झुकाव रहा है। उसमें भारतीय राष्ट्रीयता की रक्षा के लिए बच्चों में भी उत्तेजना जागृत करने के प्रयत्न हुए। इसके साथ-साथ बाल साहित्य की विविध विधाओं में भी प्रगति हुई। डॉ० गोरखप्रसाद, चंद्रमौलि शुक्ल आदि ने वैज्ञानिक बाल साहित्य लिखा। बच्चों के लिए अनेक रोचक जीवनी-पुस्तकें प्रकाशित हुई। कहानियों की मनोरंजक पुस्तकें तो बड़ी संख्या में प्रकाशित हुई थीं। छोटे बच्चों को अक्षर और मात्राओं का ज्ञान कराने वाली कई पुस्तकें भी प्रकाशित हुई। स्वर्ण सहोदर, गणेशराय मिश्र, अमृतलाल दुबे, कन्हैया लाल शर्मा, आत्माराम देवकर, कालूराम बाजपेई आदि की लिखी इन पुस्तकों में शिशु पाठकों की रुचि का पूरा ध्यान रखा गया था।'' [34] डॉ० श्रीप्रसाद लिखते हैं - ''स्वातंत्र्यपूर्व काल में बाल साहित्य का आधार सुचिंतित रूप से सुदृढ़ हो चुका था। बाल साहित्य की सभी विधाओं का पत्रिकाओं में संतुलन रहता था और संपादक पत्रिकाओं में अपनी ऐसी संपादकीय दृष्टि का उल्लेख करता था जिसका संबंध बालक समाज से हो। आधुनिक बाल साहित्य का स्वरूप स्वातंत्र्यपूर्व काल में ही निखर उठा था। महावीर प्रसाद द्विवेदी, निराला, पंत और प्रेमचंद्र जैसे साहित्यकार भी बाल साहित्य से जुड़ गए थे।'' [35] स्वातंत्र्यपूर्व का इतना समृद्ध साहित्य यथार्थ दृष्टि से बाल साहित्य की मजबूत नींव ही कही जा सकती है जिस पर आधुनिक बाल साहित्य का गगनचुम्बी महल खड़ा होना शेष था। दूसरे शब्दों में कहें तो स्वतंत्रता के पूर्व बाल साहित्य के भंडार में कमी किसी बात की नहंीं थी। यदि कम था तो उसका उचित मूल्यांकन एवं सम्मान। इस लम्बी यात्रा से इस साहित्य ने बहुत कुछ प्राप्त किया परंतु जिस स्थान का हकदार उस समय का साहित्य था वह उसे नहीं प्राप्त हुआ। इसी चिंता से चिंतित श्री कृष्ण विनायक फड़के 'बाल सखा' मई 1945 के अंक में लिखते हैं -''अभी तक जो बाल साहित्य हिंदी में बना है, वह किसी निर्दिष्ट और शास्त्रीय पद्धति के आधार पर नहीं है। बाल साहित्य की प्रगति और भावी रूपरेखा पर गंभीर विचार करने के लिए बाल साहित्य के प्रकाशकों, लेखकों, संपादकों, मनोवैज्ञानिकों, शिक्षा विशेषज्ञों औरअनुभवी शिक्षकों के सम्मेलन की आवश्यकता है।'' 36 लेकिन यहाँ तक आते-आते यह परिचय या सहारे का मोहताज नहीं था, बल्कि भविष्य के साहित्य निर्माण का सुदृढ़ स्तंभ सिद्ध हुआ।

(ख) स्वातंत्र्योत्तर युग (1947 से अब तक):-

स्वतंत्रता से पूर्व जनता में पराधीनता ने क्रांति की दबी आग लगा दी थी जो धीरे-धीरे इतनी प्रचंड हुई कि अंग्रेजों का सारा साम्राज्य ही जलकर नष्ट हो गया क्योंकि भारतीय जनमानस ने 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं' गोस्वामी तुलसीदास जी उक्ति का अर्थ भली-भाँति जान लिया था। देश को स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही समाज की आवश्यकताओं में परिवर्तन भी स्वाभाविक ही है और समाज की माँग की पूर्ति साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। अतः स्वदेश रक्षा, अखंडता, विजयोल्लास राष्ट्रीय गौरव गाथा, राष्ट्रीय

प्रगति तथा देश की सुंदरता एवं महानता आदि विषय बाल साहित्य में परिलक्षित होने लगे। राष्ट्रीय पर्वों पर बालगीतों का महत्व निरंतर बढ़ा, बाल पत्रिकाओं के अतिरिक्त प्रौढ़ साहित्य के पत्र-पत्रिकाओं में भी बाल साहित्य की गरिमामयी उपस्थिति दर्ज हुई। कुल मिलाकर स्वतंत्रता के उपरांत बाल विकास एवं बाल शिक्षा के महत्व को जनसाधरण ने समझा। सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थानों ने बाल साहित्य के प्रति उत्साह दिखाया और लगभग सभी विधाओं पर प्रकाशन प्रारंभ हुआ।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री एवं बच्चों के प्रिय चाचा नेहरू जी ने प्रसिद्ध कार्टूनिस्ट शंकर के सहयोग से चिल्ड्रेंस बुक ट्रस्ट स्थापित कराया जो आज भी सर्वांगीण बाल विकास के लिए उच्चकोटि का साहित्य प्रकाशित करने में कोई ढिलाई नहीं कर रहा है। नेशनल बुक ट्रस्ट भी स्तरीय बाल साहित्य को प्रकाशित करता रहा है। सन् 1957 से आज तक यह ट्रस्ट अपने उद्देश्य को बखूबी पूरा कर रहा है। भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से बच्चों की संपूर्ण पत्रिका 'बाल भारती' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इसके बाद 'नंदन' तथा 'पराग' ने बाल साहित्य के उत्थान में अहम भूमिका अदा की है। यह साहित्य तेज गति से चलता हुआ अपने क्षेत्र विस्तार के साथ-साथ नित नवीन प्रयोग और विषयों की विविधता को ग्रहण करता रहा। इस समय तक बाल साहित्यकारों की सोच में बड़ा परिवर्तन देखने को मिला। अब बच्चों को विज्ञान साहित्य, नवीन खोजों एवं नई प्रेरणा का साहित्य प्रदान करने की होड़ सी लग गई, घिसे-पिटे विषय अथवा पुरानी परंपरा से बाल साहित्य का चोला छूट रहा था। नवीनता की आभा इस के मुख पर स्पष्ट देखी जा सकती थी। यह परिवर्तन अंतरिक्ष यात्राओं में चंद्रयात्राएवं नवीन वैज्ञानिक खोजों का परिणाम ही कहा जायेगा, परंतु बाल साहित्य समीक्षकों का एक वर्ग मान रहा था कि - 'आधुनिकता के नाम पर यदि आप देवी-देवताओं, राजा-रानियों और परी-कथाओं को बाल साहित्य से निकाल देना चाहते हैं तो यह कहना होगा कि बाल साहित्य की चर्चा करने से पहले बाल मनोविज्ञान के बारे में आप थोड़ी जानकारी बढ़ाएँ। धर्म निरपेक्षता के नाम पर हम धर्म और नैतिकता को बिसारते चले गये, अब बच्चों को अपनी संस्कृति सभ्यता, परंपराओं आदि से भी काटना चाहेंगे।'' वही दूसरा वर्ग बिल्कुल इसके विपरीत धारणा रखता है - ''हम बात करते हैं मंगल और चंद्र यात्रा की किन्तु बच्चांे को देते हैं राक्षसों और परियों का अवैज्ञानिक साहित्य।'' [37] डॉ० हरिकृष्ण देवसरे तत्कालीन परिस्थितियों का मूल्यांकन करते हुए लिखते हैं- ''नई धारा के बाल साहित्य लेखक अपने उद्देश्य में अधिक सफल हैं। वे बच्चों को पहचानने की कोशिश करते हैं, उन्हें उनकी जिज्ञासाओं का उत्तर देते हैं। इस नए बाल साहित्य में बच्चों को जीवन के यथार्थ से जुड़ने का अवसर मिलता है।'' [38] यह वह दौर था जब बाल साहित्य अपने चरण विकास के स्वर्ण शिखर की ओर बढ़ाता चला जा रहा था जहाँ महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत, निराला एवं दिनकर जैसे अनेक नामचीन साहित्यकारों ने बाल साहित्य पर अपनी लेखनी को चलाकर स्वयं को धन्य माना वहीं 'नीली चिड़िया' (हरिवंश राय बच्चन), 'हुआ सवेरा उठो-उठो' (सोहन लाल द्विवेदी), 'निंदिया आ जा' (अमृतलाल नागर), 'दादा की कचहरी' (विष्णु प्रभाकर), 'बतूता का जूता' (सर्वेश्वर दयाल सक्सेना) जैसी अनेक कृतियों के माध्यम से कृतिकार बच्चों के मन तक पहुँचने का प्रयास कर रहे थे। महादेवी वर्मा की बच्चों के लिए लिखी गई 'बया चिड़िया' कविता में बाल मनोविज्ञान की अभिव्यक्ति देखते ही बनती है -

बया हमारी चिड़िया रानी।

तिनके-तिनके महल बनाती, ऊँची डालों पर लटकाती।

खेतों से फिर दाना लाती, नदियों से भर लाती पानी।।

तुझको दूर न जाने देंगे, दानों से आँगन भर देंगे।

और हौज में भर देंगे हम, मीठा-मीठा पानी।।

फिर अंडे सेयेगी तू जब, निकलेंगे नन्हें बच्चे तब।

हम आकर बारी-बारी से, कर लेंगे उनकी निगरानी।।

फिर जब उनके पर निकलेंगे, उड़ जाएँगे बया बनेंगे।

तब हम तेरे पास रहेंगे, तू रोना तम चिड़िया रानी।।

बया हमारी चिड़िया रानी। [39]

यह दौर कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक तथा जीवनी आदि को विविधता के साथ नया उन्मेष देता हुआ निरंतर विकासोन्मुख था। इस काल का बाल साहित्य बच्चों की रूचि एवं ज्ञान को बढ़ाने वाला रहा। बच्चों की मनोवृत्ति को समझना कोई सरल कार्य नहीं परंतु इस समय तक बाल साहित्यकार बच्चों की जिज्ञासाओं की अभिव्यक्ति अपने साहित्य में प्रस्तुत करने लगे थे। अतः इस काल में बाल साहित्य विभिन्न विधाओं में पल्लवित होकर बच्चों की रुचि के अनुकूल स्वरूप धारण करता हुआ गतिमान था। निरंकार देव सेवक अपने बालगीत में बच्चों की खिलंदड़ी मानसिकता को प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं -

तुम बनो किताबों के कीड़े, हम खेल रहे मैदानों में।

तुम घुसे रहते घर के अंदर, तुमको है पंडित जी का डर,

हम सखा तितलियों के बनकर, उड़ते फिरते उद्यानों में,

तुम बनो किताबों के कीड़े, हम खेल रहे मैदानों में। [40]

यहाँ तक आते-आते बाल स्वभाव में बड़ा परिवर्तन आ चुका था। कुछ इसी तरह बच्चों के मनोविज्ञान को परखते हुए डॉ० प्रभाकर माचवे लिखते हैं -

अब के बच्चे बड़े सयाने, गाते हैं टी0 वी0 के गाने।

उन्हें न भाते दूध-बतासे, चाॅकलेट के बिना रुँआसे।

अब न खेले कोई कंचे, उन्हें चाहिए सिर्फ तमंचे।

नहीं कबड्डी अथवा कुश्ती, लिखना पढ़ना ? आती सुस्ती।

अब बूझो 'क्विज' तो हम माने, अब के बच्चे कितना जाने ?

अब के बच्चे नहीं है भोले, अब के बच्चे जगत टटोले।

कंधे पर बिस्तर और झोले, साइकिल ले गिरि बन पर डोले। [41]

डॉ० चक्रधर नलिन जी लिखते हैं -''इक्कीसवीं सदी के बाल काव्य-सर्जकों में डॉ० नागेश पांडेय 'संजय उल्लेखनीय हैं। मोबाइल जी कविता में संचार क्रांति की चर्चा है। कवि की निम्न पंक्तियाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं -

मोबाइल जी

सचमुच तुम हो, बड़े काम की चीज।

गेम, कैमरा, कैलकुलेटर, एफ0 एम0, इंटरनेट,

कंप्यूटर भी इसमें आया फिर भी सस्ता रेट। [42]

इसी क्रम में घमंडी लाल अग्रवाल की कविता 'कण-कण में विज्ञान' बदले हुए समूचे परिवेश को चित्रित करती है -

बदल गया परिवेश समूचा / हुआ आधुनिक अब हर कूचा।

कंप्यूटर पहँुचा घर-घर में, / इंटरनेट आया दफ्तर में।

शुरू सौर ऊर्जा के चर्चे, / पढ़ते सब सुविधा के पर्चे।

नई सदी ने पंथ दिखाया, / कण-कण में विज्ञान समाया।

बालमन को परखती एवं समय-समाज को प्रतिबिंबित करती हुई बाल कविता अपने नए स्वरूप में सामने आई इसे नया कलेवर देने वाले साहित्यकारों में सर्वश्री रामधारी सिंह 'दिनकर', सूर्यभानु गुप्ता, आरसी प्रसाद सिंह, रामसिंहासन सहाय 'मधुर', रमापति शुक्ल, मुरारी लाल शर्मा 'बालबंधु', सुभद्रा कुमारी चैहान, शकुंतला सिरोठिया, विनोद चंद्र पांडेय 'विनोद', निरंकार देव सेवक, द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी, चंद्रपाल सिंह यादव 'मयंक', विष्णुकांत पांडेय, कन्हैयालाल नंदन, दामोदर अग्रवाल, डॉ० राष्ट्रबंधु, डॉ० श्रीप्रसाद, डॉ० हरिकृष्ण देवसरे, शांति अग्रवाल, डॉ० प्रकाश मनु, सूर्यकुमार पांडेय, जय प्रकाश भारती, चक्रधर नलिन, डॉ० रोहिताश्व अस्थाना, दिविक रमेश, डॉ० सुरेंद्र विक्रम एवं डॉ० नागेश पांडेय 'संजय' इत्यादि प्रमुख नाम हैं। कविता के समानांतर ही बाल कहानी ने भी अपने स्वरूप का विस्तार एवं परिवर्तन किया। जहाँ जादू-टोने और राक्षसों आदि की कहानियों को नकारा जाने लगा वहीं नवीन विषय तथा नई सोच से ओत-प्रोत कहानियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। कुल मिलाकर सामयिक जीवन मूल्यों पर आधारित कहानियों की रचना प्रारंभ हुई। डॉ० सुरेंद्र विक्रम लिखते हैं -''आज बाल कहानीकारों ने इस तथ्य को अच्छी तरह से समझ लिया है कि कहानी के पात्र बच्चे ही हों, घटनाएँ भी उनके पास-पड़ोस से मेल खाती हों तथा जिज्ञासा, कल्पना और भावनाएँ भी बच्चों के अनुरूप होनी चाहिए। यह गर्व का विषय है कि आज ढेर सारी बाल कहानियाँ परंपरागत लीक से हटकर लिखी जा रही हैं जिनमें आदर्शवाद की जगह यथार्थवाद की प्रधानता है। चूँकि आज का बालक यथार्थ में साँस ले रहा है इसलिए उसे इन कहानियों से बड़ा लगाव है तथा वह इन्हें चाव से पढ़ता है।'' [44] आज हिंदी बाल साहित्य में कहानी शिल्प और वस्तु दोनों ही दृष्टियों से विकास को प्राप्त कर चुकी है। जहाँ यह कहानी बच्चों की अपनी समस्या को लेकर लिखी जा रही है वहीं इन कहानियों के माध्यम से बालकों को अनुरंजित कर नई दिशा प्रदान की जा सकती है। कहानीकी लंबी परंपरा को नवीन प्रयोगों से गढ़ने वाले साहित्यकारों में डॉ० मस्तराम कपूर 'उर्मिल', मनोहर वर्मा, जयप्रकाश भारती, डॉ० हरिकृष्ण देवसरे, विभा देवसरे, यादराम रसेंद्र, हसन जमाल छीपा, श्री कृष्ण, सत्य जायसवाल, मालती जोशी, यादवेंद्र शर्मा 'चंद्र', मनहरण चैहान, सूर्यबाला, लक्ष्मीचंद्र गुप्त, श्री प्रसाद गुप्त, विनोद विभाकर, राधेश्याम 'प्रगल्भ', नागेश पांडेय 'संजय' और जाकिर अली 'रजनीश' आदि प्रमुख नाम हैं। इस काल में बच्चों के लिए रोचक और प्रभावशाली उपन्यासों की एक लंबी श्रृंखला है जिसमें 'आओ चाँद के देश चलें', 'डाकू का बेटा' (डॉ० हरिकृष्ण देवसरे), 'एक डर पाँच निडर' (सत्य प्रकाश अग्रवाल), एक था छोटा सिपाही (विमला शर्मा), बीस बरस की मौत (वीर कुमार अधीर), शनि लोक (विभा देवसरे), माँ का आँचल (शांति भटनागर) और खोखला सिक्का (अवतार सिंह) इत्यादि प्रमुख उपन्यास हैं। इनके अतिरिक्त राधेश्याम प्रगल्भ, यादवेंद्र शर्मा चंद्र, व्यथित हृदय, मनहरण चैहान, रत्न प्रकाश शील, के. पी. सक्सेना और डॉ० साजिद खान जैसे अनेक उपन्यासकार इस विधा को गति प्रदान कर रहे हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही नाटकों के सृजन को खूब बल मिला। 1955 ई0 में बाल नाटक माला (नर्मदा प्रसाद खरे), 1963 में पैसों का पेड़ (कमलेश्वर) तथा 17 बाल एकांकियों का संग्रह 'सवेरे के फूल' (व्यथित हृदय) के साथ ही नाटकों की लंबी श्रंृखला है जिनमें लाख की नाम (सर्वेश्वर दयाल सक्सेना), बच्चों के नाटक (डॉ० मस्तराम कपूर'उर्मिल'), बु)िमान गधा (लक्ष्मी नारायण लाल), बच्चों के रोचक नाटक, बच्चों के शिक्षाप्रद नाटक (डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल), छोटे मास्टर जी (डॉ० नागेश पांडेय 'संजय') एवं डॉ० हरिकृष्ण देवसरे द्वारा संपादित 'बच्चों के 100 नाटक' और डॉ० श्रीप्रसाद द्वारा संग्रहीत अनेक नाटक इस युग के प्रमुख नाटक हैं। हास्य नाटककारों में के.पी. सक्सेना ने खूब सफलता अर्जित की। इनके अतिरिक्त अनेक एकांकीकारों ने बच्चों को आधुनिक भाव बोधों से परिपूर्ण साहित्य प्रदान किया। ज्ञान और विज्ञान से ओत-प्रोत जीवनी, यात्रावृत्त समेत अनेक विधाओं की दृष्टि से इस काल के साहित्य ने आशातीत प्रगति की। 'खेल भी विज्ञान भी' (योगेंद्र कुमार भल्ला), पानी और हमारा जीवन (व्यथित हृदय), पान बोला (रामचंद्र तिवारी), एक दिन यहाँ भी (डॉ० हरिकृष्ण देवसरे), ये देश के लोग (भगवत शरण उपाध्याय), संसार के सात महान आश्चर्यों की कहानी (विमल दत्त) एवं कन्हैया लाल नंदन के विदेश यात्रा के रोचक वृत्त भी अब पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं। इसके उपरांत आज यात्रावृत्तों की एक लंबी श्रंृखला है।

आज अनेक ऐसी पुस्तकें हैं जो बालोपयोगी हैं। जिनका आद्यांत उल्लेख कर पाना शायदसंभव नहीं। निरंकार देव सेवक ने जिस आलोचना की भागीरथी को धरा पर उतरा था वह आज शोध प्रबंधों तक जा पहुँची जिससे अनेक उपासक पी-एच0डी0 की उपाधि भी प्राप्त कर चुके हैं, जिनमें से प्रमुख हैं - डॉ० हरिकृष्ण देवसरे, डॉ० राष्ट्रबंधु, डॉ० मस्तराम कपूर 'उर्मिल', डॉ० ज्योतिस्वरूप, डॉ० श्रीप्रसाद, डॉ० कुसुम डोभाल, डॉ० विजयलक्ष्मी सिन्हा, डॉ० निर्मला बर्मन, डॉ० नागेश पांडेय 'संजय', डॉ० कामना सिंह इत्यादि।

इस श्रंृखला के विकास का पता इस बात से लगता हैं कि अनेक बाल साहित्यकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर स्वतंत्र शोधकार्य हो चुके हैं तथा अनेक शेधकार्य हो रहे हैं। हिंदी बाल साहित्य में जो शोध परंपरा बंगला बाल साहित्य से आई थी वह आज बंगला बाल साहित्य से कई गुना आगे हैं। समग्र रूप से देखें तो बाल साहित्य के लिए स्वतंत्रता के बाद का समय स्वर्णयुग के रूप में सामने आया। इस युग में सर्वश्री निरंकार देव सेवक, डॉ० श्रीप्रसाद, डॉ० हरिकृष्ण देवसरे, द्वारिकाप्रसाद माहेश्वरी, विनोद चंद्र पांडेय 'विनोद', डॉ० राष्ट्रबंधु, जयप्रकाश भारती, डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल, डॉ० प्रकाश मनु, आनंद प्रकाश जैन, डॉ० विजयलक्ष्मी सिन्हा, डॉ० मधु पंत, डॉ० सुरेंद्र विक्रम एवं डॉ० नागेश पांडेय 'संजय' जैसे अनेक आदरणीय साहित्यकारों ने बाल साहित्य के चहँुमुखी विकास में अपना अमूल्य योगदान दिया। इन सबके अतिरिक्त चक्रधर नलिन, डॉ० दिविक रमेश, सूर्य कुमार पांडेय, डॉ० बालशौरि रेड्डी, भैंरूलाल गर्ग, विभा देवसरे, डॉ० शकुंतला कालरा, मृणालिनी श्रीवास्तव, शांति अग्रवाल, डॉ० उषा यादव, कृष्ण शलभ, डॉ० विनय कुमार मालवीय, रमाशंकर, जाकिर अली 'रजनीश' एवं अजय जनमेजय इत्यादि साहित्यकारों ने बाल साहित्य की तन-मन से सेवा की। बाल साहित्य के संवर्द्धन एवं पोषण में लगी दर्जनों पत्रिकाओं में प्रमुख नंदन, चंपक, बाल भारती, बाल साहित्य समीक्षा, चंदा मामा, सुमन सौरभ, बाल हंस, नन्हें सम्राट, बाल वाणी, वाल वाटिका, बच्चों का देश, बाल भास्कर आदि हैं। बात यहीं समाप्त नहीं होती, कई प्रमुख प्रौढ़ साहित्य के पत्र-एवं पत्रिकाओं में बाल साहित्य की गरिमामयी उपस्थिति इस के विकास की गति का परिचय देती हैं।

स्वतंत्रता के बाद से आज तक के विकास क्रम में बाल साहित्य ने लगभग सभी विधाओं में आशातीत प्रगति प्राप्त की है। जिसका प्रमाण आज का भारी भरकम बालोपयोगी साहित्य भंडार है जिसका यदि क्रम से संपूर्ण इतिहास लिखने का प्रयास किया जाए तो 'बाढइ कथा पार नहिं लाहऊँ' की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। इसी लिए 'ताते मैं अति अलप बखाने। थोरे महु जानिहहि सयाने।।' इन सीमित पृष्ठों में बाल साहित्य के इतिहास को समेटने की विनम्र चेष्टा तो की गई है किंतु महासिंधु सी विस्तीर्णता समेटे इस इतिहास को शब्दीकृत कर पाना तो डॉ० प्रकाश मनु जैसे किसी विरल और दृढ़निश्चयी समीक्षक के लिए ही संभव है, जिसे उन्होंने हिंदी बाल साहित्य का इतिहास ग्रंथ लिखकर साकार कर दिया है। अस्तु, कह सकते हैं कि बाल साहित्य का गरिमामयी इतिहास निरंतर विकासशील रहते हुए समृ)ि के नए सोपान गढ़ रहा है और निःसंदेह उसकी विकास यात्रा अप्रतिम ही नहीं अनंतिम भी है।

सन्दर्भ

1. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा), पृ0 125
2. डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल - ग्यारह नुक्कड़ नाटक, पृ0 5
3. डॉ० हरिकृष्ण देवसरे - हिंदी बाल साहित्य: एक अध्ययन, पृ0 6
4. डॉ० इंद्रपाल सिंह-अपभं्रश काव्य (लेख), साहित्यिक निबंध (सं0 डॉ० त्रिभुवन सिंह), पृ0 64
5. जयप्रकाश भारती - बाल साहित्य इक्कीसवीं सदी में, पृ0 23
6. डॉ० शकुंतला कालरा - बाल कहानी का स्वरूप और उसकी विकास यात्रा (लेख), बाल कथा सुमन माला, (सं0 डॉ० शकुंतला कालरा), पृ0 23
7. डॉ० इंद्रपाल सिंह-अपभं्रश काव्य (लेख), साहित्यिक निबंध (सं0 डॉ० त्रिभुवन सिंह), पृ0 65
8. जयप्रकाश भारती - बाल साहित्य इक्कीसवीं सदी में, पृ0 25
9. हृदयेश - किस्सा हवेली (उपन्यास), पृ0 241
10. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा), पृ0 397
11. जयप्रकाश भारती - बाल साहित्य इक्कीसवीं सदी में, पृ0 27
12. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) , पृ0 126
13. आचार्य रामचंद्र शुक्ल - हिंदी साहित्य का इतिहास (प्रथम संस्करण का वक्तव्य)
14. रामस्वरूप चतुर्वेदी - हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास (संपादकीय से), पृ0 9
15. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा) , पृ0 117

16. डॉ० शंभूनाथ पांडेय - हिंदी साहित्य के आदिकाल के लोक भाषा काव्य (लेख) साहित्यिक निबंध (सं0 डॉ० त्रिभुवन सिंह), पृ0 88
17. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य, (इतिहास एवं समीक्षा), पृ0 117-118
18. चक्रधर नलिन - हिंदी साहित्य में किशोर काव्य का क्रमिक विकास (लेख) भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम, (सं0 विनोद चंद्र पांडेय), पृ0154
19. डॉ० विजयेंद्र स्नातक - भक्ति काल की उपलब्धियाँ (लेख), हिंदी साहित्य का इतिहास (सं0 डॉ० नगेंद्र), पृ0 268
20. काव्य संकलन, सं0 वीरेंद्र कुमार वर्मा, पृ0 19
21. डॉ० श्यामसुंदर दास - कबीर ग्रंथावली, डॉ० श्रीराम शर्मा, पृ0 77
22. आचार्य रामचंद्र शुक्ल - भ्रमर गीत, डॉ० श्रीराम शर्मा, पृ0 12
23. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य, (इतिहास एवं समीक्षा), पृ0 109
24. गोस्वामी तुलसीदास - गीतावली (बाल कांड), पृ0 47, 57, 69
25. गोस्वामी तुलसीदास - रामचरित मानस (बाल कांड), पृ0 53-54
26. काव्य संकलन, सं0 वीरेंद्र कुमार वर्मा, पृ0 45
27. डॉ० चक्रधर नलिन - हिंदी साहित्य में किशोर साहित्य का क्रमिक विकास, (लेख), भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम, पृ0 157
28. डॉ० अंबाप्रसाद 'सुमन' - रीतिकाल की अन्य काव्य प्रवृत्तियाँ, हिंदी साहित्य का इतिहास (सं0 डॉ० नगेंद्र), पृ0 370
29. चक्रधर नलिन - हिंदी बाल साहित्य का विधागत विकासक्रम, (लेख), भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम, (सं0 विनोद चंद्र पांडेय), पृ0 77
30. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य, (इतिहास एवं समीक्षा), पृ0 122,123
31. निरंकार देव सेवक - वही, पृ0 130
32. डॉ० श्रीप्रसाद - हिंदी बाल साहित्य: क्रमिक विकास (लेख), भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम, (सं0 विनोद चंद्र पांडेय), पृ0 69
33. निरंकार देव सेवक - बालगीत साहित्य, (इतिहास एवं समीक्षा), पृ0 133
34. डॉ० हरिकृष्ण देवसरे - बाल साहित्य: मेरा चिंतन, पृ0 74
35. डॉ० श्रीप्रसाद - हिंदी बाल साहित्य: क्रमिक विकास (लेख), भारतीय बाल साहित्य के विविध आयाम, (सं0 विनोद चंद्र पांडेय), पृ0 70
36. डॉ० हरिकृष्ण देवसरे - बाल साहित्य: मेरा चिंतन, पृ0 74
37. डॉ० विजयलक्ष्मी सिन्हा - आधुनिक हिंदी में बाल साहित्य का विकास, पृ0 137
38. डॉ० हरिकृष्ण देवसरे - बाल साहित्य: मेरा चिंतन, पृ0 76
39. डॉ० सुरेंद्र विक्रम - हिंदी बाल साहित्यः विविध परिदृश्य, पृ0 38
40. निरंकार देव 'सेवक' - उमंग, पृ0 49
41. बाल साहित्य समीक्षा, दिसंबर 2005, पृ0 12
42. बाल साहित्य समीक्षा, जुलाई 2006, पृ0 24
43. बाल वाटिका, जनवरी 2006 (विज्ञान विशेषांक), पृ0 7
44. डॉ० सुरेंद्र विक्रम - बाल पत्रकारिता: उद्भव और विकास, पृ0 32-33